राजस्थान उच्च न्यायालय, जयपुर पीठ

खंडपीठ विशेष अपील रिट संख्या 1304/2005

1. विशम्भर प्रसाद

2. राजेंद्र प्रसाद

दोनों स्वर्गीय नाथूलाल के पुत्र मालीराम के पुत्र हैं।

3. श्रीमती मुल्ली देवी पुत्री स्वर्गीय नाथूलाल,

सभी निवासी ग्राम श्रीमाधोपुर जिला सीकर।

----अपीलार्थीगण

बनाम

1. अतिरिक्त संभागीय आयुक्त, जयपुर।

2. नगरपालिका बोर्ड कार्यकारी अधिकारी, श्रीमाधोपुर के माध्यम से।

3. मनोहरलाल पुत्र मुक्तीलाल, वर्तमान में निवासी आजाद नगर, संजय स्कूल के पास, मदनगंज, किशनगढ़, जिला अजमेर।

----प्रत्यर्थीगण

<u>से संबद्ध</u>

खंडपीठ विशेष अपील रिट संख्या 852/2006

1. विशम्भर प्रसाद

2. राजेंद्र कुमार

दोनों स्वर्गीय नाथूलाल के पुत्र मालीराम के पुत्र हैं।

3. श्रीमती मुल्ली देवी पुत्री स्वर्गीय नाथूलाल, सभी निवासी ग्राम श्रीमाधोपुर, जिला सीकर

----अपीलार्थीगण

बनाम

1. अतिरिक्त संभागीय आयुक्त, जयपुर।

2. नगर पालिका बोर्ड, श्रीमाधोपुर।

3. मनोहर लाल पुत्र मुक्तीलाल निवासी मोहल्ला मौवालान, श्रीमाधोपुर, जिला सीकर वर्तमान में पहाड़िया जनरल स्टोर्स, किशनगढ़ जिला अजमेर।

----प्रत्यर्थीगण

अपीलार्थी (गण) की ओर से	:	श्री कमलाकर शर्मा, वरिष्ठ अधिवक्ता। श्री मधुसूदन राजपुरोहित, अधिवक्ता।
प्रत्यर्थी (गण) की ओर से	:	अनिल मेहता, एएजी ने श्री यशोधर पांडे, अधिवक्ता श्री एमएम रंजन, वरिष्ठ अधिवक्ता श्री दौलत शर्मा, अधिवक्ता श्री सगीर अहमद कुरैशी, अधिवक्ता द्वारा सहायता प्रदान की।

माननीय न्यायमूर्ति मनिन्द्र मोहन श्रीवास्तव

माननीय न्यायमूर्ति विनोद कुमार भरवानी

आदेश

रिपोर्टेबल

08/11/2021

सुना गया।

ये अपीलें एकलपीठ सिविल विविध रिट याचिका संख्या 2023/1995 और एकलपीठ रिट याचिका संख्या 2024/1995 नाथू लाल बनाम अतिरिक्त संभागीय आयुक्त, जयपुर और अन्य में विद्वान एकलपीठ द्वारा पारित दिनांक 08.02.2005 के आदेश से उत्पन्न हैं, जिसके तहत, एकलपीठ ने नाथू लाल द्वारा दायर रिट याचिकाओं को अपास्त कर दिया है। तथ्यात्मक आधार, अंततः विद्वान एकलपीठ द्वारा पारित आदेश की ओर ले जाता है, यह है कि रिट याचिकाकर्ता ने 14.12.1978 को नगर पालिका के प्रशासक के आदेश से 14.08.1974 को उनके पक्ष में की गई सिफारिश के आधार पर पट्टे अर्थात भूमि का पट्टा प्रदान किया गया था। समय के साथ, प्रत्यर्थी संख्या 3 मनोहर लाल,

जो उक्त भूमि के हिस्से का पट्टा लेने के इच्छुक थे, बगल की जमीन के मालिक होने के नाते भी आवेदन किया, लेकिन उन्हें कोई पट्टा नहीं दिया गया। बाद में, याचिकाकर्ता ने निर्माण करने की अनुमति देने के लिए एक आवेदन दिया, जिसे 16.05.1994 के आदेश द्वारा स्वीकार कर लिया गया। इस स्तर पर, प्रत्यर्थी संख्या 3 ने मुख्य रूप से इस आधार पर राजस्थान नगरपालिका अधिनियम की धारा 300 के तहत पुनरीक्षण अधिकार क्षेत्र को लागू करने के लिए एक आवेदन दायर किया कि याचिकाकर्ता को 1978 में गलत तरीके से पट्टा दिया गया है। विद्वान आयुक्त ने अधिनियम की धारा 300 के तहत शक्ति का प्रयोग करते हुए दिनांक 14.12.1978 के आदेश के तहत पट्टा प्रदान करने के साथ-साथ 16.05.1994 को निर्माण बढ़ाने की अनुमति देने के आदेश को रद्द कर दिया।

इन दो आदेशों ने याचिकाकर्ता द्वारा एकलपीठ के समक्ष दो रिट याचिकाओं को जन्म दिया।

एकलपीठ के समक्ष, अपीलार्थी ने तर्क दिया कि उसे 14.08.1974 को प्रशासक द्वारा पट्टा देने के आदेश के तहत 14.08.1974 की सिफारिश के आधार पर भूमि का पट्टा दिया गया था, जिसे लंबे समय तक चुनौती नहीं दी गई और इसलिए, इस देर से, नगरपालिका अधिनियम की धारा 300 के तहत शक्तियों की आड़ में पुनरीक्षण प्राधिकरण, वह अपने पक्ष में समझौते के आदेश को रद्द नहीं कर सका। याचिकाकर्ता के अनुसार, किसी भी मामले में, अनुदान कानून के अनुसार था और कानून के किसी भी प्रावधान के विरूद्ध नहीं था।

दूसरी ओर, नगरपालिका बोर्ड द्वारा अपनाया गया रुख यह था कि याचिकाकर्ता को दी गई लीज को आयुक्त द्वारा इस बात को ध्यान में रखते हुए रद्द कर दिया गया था कि पट्टा राज्य सरकार द्वारा जारी 09.06.1977 के परिपत्र में निहित प्रावधानों के अनुसार नहीं था क्योंकि अपीलार्थी के पास एक और पक्का घर था और इसलिए, उनके पक्ष में कोई पट्टा नहीं दिया जा सकता था।

एकलपीठ का विचार था कि केवल देरी के आधार पर, आयुक्त द्वारा पारित आदेश में हस्तक्षेप नहीं किया जा सकता है क्योंकि याचिकाकर्ता ने अपने पक्ष में आदेश प्राप्त किया था और इसे अपने पास रखा था।

चूंकि दिनांक 16.05.1994 के आदेश के कारण, निर्माण की अनुमति प्रदान करना भी प्रकृति में परिणामी था, इसलिए उस आदेश को भी रद्द कर दिया गया था। यहां तक कि शुल्क के भुगतान पर नियमितीकरण की दिशा में विचार करने के संबंध में निर्देश भी शून्य पर निर्धारित किए गए थे।

विद्वान एकलपीठ द्वारा पारित उपरोक्त आदेशों और आयुक्त के आदेशों का भी हवाला देते हुए, जो विद्वान एकलपीठ के आदेश में विलय हो गए, यह तर्क दिया जाता है कि याचिकाकर्ता जिसके पास विचाराधीन भूमि के लिए अपनी भूमि थी और इसलिए, वह उक्त भूमि का मालिक था, ने नगरपालिका अधिनियम के प्रावधानों के तहत पट्टा देने के लिए आवेदन किया था, जिसे 14.08.1974 को उसके पक्ष में विधिवत सिफारिश की गई थी और उस आधार पर, बाद में, 14.12.1978 को उनके पक्ष में पट्टा प्रदान किया गया।

याचिकाकर्ता के पक्ष में पट्टा देना कोई रहस्य नहीं था, बल्कि प्रत्यर्थीगण की पूर्ण जानकारी और नोटिस में था, जैसा कि 27.09.1983 के आवेदन अनुलग्नक ए-15 से परिलक्षित होता है।

हालांकि, इसे लंबे 16 वर्षों तक कोई भी चुनौती नहीं दी गई थी। निवेदन यह है कि भले ही अधिनियम के तहत सीमा की कोई अवधि निर्धारित नहीं की गई हो, धारा 300 के तहत शक्ति का उपयोग उचित अवधि के भीतर किया जाना है और लंबे विलंब के बाद इसका उपयोग नहीं किया जा सकता है, जैसा कि वर्तमान मामले में किया गया है।

अपीलार्थी के विद्वान अधिवक्ता की दूसरी दलील यह है कि पट्टे की मंजूरी अधिनियम की धारा 18 के प्रावधानों द्वारा शासित थी, जिसे 1974 के नियमों के साथ पढ़ा गया था, जो नगरपालिका अधिनियम की धारा 297 और अन्य प्रावधानों के तहत शक्ति का उपयोग करके बनाए गए थे। आयुक्त ने अधिनियम और 1974 के नियमों का उल्लेख किए बिना सरकार द्वारा 09.05.1997 को जारी कार्यकारी निर्देशों के संदर्भ में पट्टे की शुद्धता और वैधता की जांच करने में अपने अधिकार क्षेत्र का प्रयोग करते हुए घोर अवैधता के साथ काम किया।

उन्होंने कहा 1974 के नियमों में ही पट्टे की मंजूरी का प्रावधान है, इसलिए, इस

स्तर पर, पट्टा प्रदान करने में किसी हस्तक्षेप की आवश्यकता नहीं है।

अंत में, यह प्रस्तुत किया जाता है कि आयुक्त ने पट्टे को रद्द कर दिया और विद्वान एकलपीठ ने मामले में शामिल कानूनी मुद्दों को उचित परिप्रेक्ष्य में नहीं समझा।

दूसरी ओर, प्रत्यर्थी संख्या 3 के अधिवक्ता ने कहा कि याचिकाकर्ता सार्वजनिक भूमि पर अतिक्रमण करने वाला था। उन्हें दिनांक 09.05.1977 के परिपत्र के अलावा धारा 80 और 1974 के नियमों के तहत निर्धारित प्रक्रिया का पालन किए बिना पट्टा प्रदान किया गया था। उन्होंने आगे कहा कि 1974 के नियमों में स्पष्ट रूप से परिकल्पना की गई थी कि पट्टा देने के लिए, कार्यवाही तैयार की जानी चाहिए जो वर्तमान मामले में नहीं की गई थी। इसलिए, यह तर्क दिया जाता है कि किसी भी मामले में, याचिकाकर्ता के पक्ष में दिया गया पट्टा कानून के अनुसार नहीं था। उन्होंने आगे कहा कि नगरपालिका बोर्ड द्वारा दायर हलफनामे से स्पष्ट रूप से पता चलता है कि पट्टा अवैध रूप से दिया गया था।

उन्होंने कहा कि यदि उक्त पट्टा दिया जाता है, तो उचित पहुंच की कमी के कारण भूमि का शेष हिस्सा बेकार हो जाएगा। वैकल्पिक दलील यह है कि यदि यह पाया जाता है कि आयुक्त ने अधिनियम के प्रावधानों और नियमों पर विस्तार से विचार नहीं करके गलती की है, तो भी यह मामला आयुक्त के पास भेजा जाना चाहिए ताकि 14.12.1978 के आदेश की वैधता की जांच की जा सके, जिसके द्वारा अपीलार्थी के पक्ष में पट्टा दिया गया था क्योंकि अपीलार्थी को कानून का उल्लंघन करते हुए पट्टे का आनंद लेने की अनुमति नहीं दी जा सकती है और इसलिए, समय की लंबी अवधि के बावजूद, वैधता की उचित जांच आवश्यक होगी, यदि यह न्यायालय आदेश पारित करने के तरीके से संतुष्ट नहीं है।

पक्षों के विद्वान अधिवक्ताओं को सुना। बहस के दौरान, दोनों पक्षों के वरिष्ठ अधिवक्ताओं द्वारा की गई व्यापक प्रस्तुतियों पर गंभीरता से विचार किया गया।

तथ्यात्मक स्कोर पर, यह निर्विवाद स्थिति है कि याचिकाकर्ता के पक्ष में 14.07.1978 को नगर पालिकाओं के निगम के प्रशासक द्वारा अनुलग्नक ए -8 में पट्टा दिया गया था।

यह पट्टा स्पष्ट रूप से नगरपालिका अधिनियम की धारा 80 के तहत प्रावधान को

संदर्भित करता है जो प्रासंगिक होने के नाते निम्नानुसार पुनः प्रस्तुत किया गया है:

> "**80. नगरपालिका निधि का अनुप्रयोग-** समय-समय पर नगरपालिका निधि में जमा की गई धनराशि इस अधिनियम और नियमों और उसके तहत बनाए गए उपनियमों के प्रयोजनों को पूरा करने के लिए आवश्यक सभी रकम, शुल्क और लागत के भुगतान के लिए और किसी अन्य कानून के तहत नगरपालिका निधि से देय सभी राशियों के भुगतान के लिए लागू की जाएगी।

इस बात पर भी कोई विवाद नहीं है कि नगरपालिका अधिनियम की धारा 80 और 92 और राजस्थान भूमि राजस्व अधिनियम की धारा 100-ए के साथ धारा 297 के तहत प्रदत्त शक्तियों का प्रयोग करते हुए, राज्य सरकार ने राजस्थान नगर पालिका (शहरी भूमि का निपटान) नियम 1974 के रूप में जाने जाने वाले नियम बनाए हैं, (संक्षेप में इसके बाद '1974 के नियम' के रूप में संदर्भित)।

सरकार द्वारा पट्टे का अनुदान नगरपालिका अधिनियम और 1974 के नियमों में निहित प्रावधान द्वारा विनियमित किया जाता है।

इसलिए, आयुक्त को अधिनियम की धारा 300 के तहत अधिकार क्षेत्र का प्रयोग करते समय अधिनियम की धारा 80 और 1974 के नियमों के प्रावधानों के संदर्भ में पट्टे की वैधता और शुद्धता की जांच करने की आवश्यकता थी। हालांकि, आयुक्त ने सरकार के परिपत्र के संदर्भ में आदेश की शुद्धता की जांच करना पसंद किया, जो 09.05.1977 को जारी किया गया था जो नियम 1974 के बहुत बाद है।

दिनांक 09.05.1977 को परिपत्र में निहित कुछ खंडों के संदर्भ में आयुक्त द्वारा जो कारण दिए गए हैं, वे अधिनियम या उसके तहत बनाए गए नियमों के किसी भी प्रावधान के संदर्भ में नहीं हैं।

सरकार के परिपत्र के आधार पर पट्टे देने के आदेश को अवैध ठहराना, अधिनियम और नियमों में शामिल ऐसी अपात्रता के अभाव में, हमारी राय में, स्पष्ट रूप से अवैध था। आयुक्त नगरपालिका अधिनियम की धारा 300 के तहत शक्तियों और अधिकार का प्रयोग करते हुए पट्टे देने की जांच कर रहे थे। इसलिए, वह कानून के तहत अधिनियम के प्रावधान और उन नियमों के संदर्भ में आदेश की शुद्धता की जांच

करने के लिए बाध्य था।

बिना किसी निष्कर्ष के कि पट्टा कानून के प्रावधानों के विरूद्ध था, पट्टे को कानून में खराब माना जाता है, यह स्पष्ट रूप से बुरा है और पेटेंट अवैध और विकृति से ग्रस्त है।

हम पाते हैं कि आयुक्त का आदेश और विद्वान एकलपीठ द्वारा पारित आदेश दोनों दिनांक 09.05.1977 के परिपत्र के खंडों के संदर्भ में पट्टे की वैधता की जांच पर आधारित हैं।

केवल इसी कारण से, विद्वान एकलपीठ द्वारा पारित आदेश कानून में कायम नहीं रह सकते हैं।

विद्वान एकलपीठ को भी गुमराह किया गया क्योंकि यह तथ्यात्मक रूप से गलत है कि याचिकाकर्ता के पक्ष में पट्टे की मंजूरी ज्ञात नहीं थी और याचिकाकर्ता ने अपने पास रखा था।

प्रत्यर्थी संख्या 3 द्वारा प्राधिकरण के समक्ष दायर 27.09.1983 के अनुलग्नक ए-15 के आवेदन से स्पष्ट रूप से पता चलता है कि उन्हें याचिकाकर्ता के पक्ष में पट्टा दिए जाने के बारे में 27.09.1983 को पता चला था, अगर पहले नहीं, लेकिन उसके बाद भी, उन्होंने प्राधिकरण के समक्ष कोई आवेदन करने के लिए कोई कदम नहीं उठाया।

इसमें कोई संदेह नहीं है कि नगर पालिका अधिनियम की धारा 300 के तहत प्रदत्त शक्ति आदेश की वैधता और शुद्धता की जांच करने का अधिकार देती है, ऐसी शक्तियों को 16 वर्ष की लंबी और अस्पष्ट देरी के बाद लागू नहीं किया जा सकता है।

वर्तमान मामले में, आयुक्त-पुनरीक्षण प्राधिकरण ने लगभग 16 वर्षों के बाद वर्ष 1978 में याचिकाकर्ता के पक्ष में किए गए पट्टा के अनुदान में हस्तक्षेप करने की मांग की। 16 वर्ष के लंबे विलंब के बाद धारा 300 के तहत शक्ति का प्रयोग उचित अवधि के भीतर नहीं कहा जा सकता है। इस अतिरिक्त आधार के लिए आयुक्त का आदेश कानून के अनुसार नहीं है और स्पष्ट रूप से इसके अधिकार क्षेत्र से अधिक है।

प्रत्यर्थी के अधिवक्ता की यह दलील कि जारी किया गया पट्टा अधिनियम के प्रावधान का उल्लंघन है, अमान्य है, इसलिए, पुनरीक्षण प्राधिकारी द्वारा किसी भी समय इसकी शुद्धता को चुनौती दी जा सकती है, स्वीकार नहीं किया जा सकता है। धारा 300

के तहत अपनी शक्ति का प्रयोग करते हुए पुनरीक्षण प्राधिकरण पूर्ण नागरिक अधिकार क्षेत्र का प्रयोग नहीं करता है। उक्त आधार पर, प्राधिकरण 16 वर्ष बाद धारा 300 में उल्लिखित प्रावधान का सहारा लेकर अधीनस्थ अधिकारियों द्वारा पारित आदेश को उलट नहीं सकता था।

इस स्तर पर, हम मामले को आयुक्त के पास वापस भेजने के इच्छुक नहीं हैं ताकि पट्टे की शुद्धता की जांच की जा सके, जब इसे उस तारीख पर लाया गया था, जब इसे लंबे विलंब के बाद उसके संज्ञान में लाया गया था। मामले को केवल इस आधार पर रिमांड पर देना डिफॉल्ट पर प्रीमियम डालने के समान होगा, जो हम करने के इच्छुक नहीं हैं।

परिणामस्वरूप, रिट याचिका की अनुमति दी जाती है और विद्वान एकलपीठ और आयुक्त द्वारा पारित आदेश को रद्द कर दिया जाता है।

(विनोद कुमार भरवानी), न्यायमूर्ति **(मनिन्द्र मोहन श्रीवास्तव),न्यायमूर्ति**

Pravesh/Heena/63-64

टिप्पणी: इस निर्णय का हिन्दी अनुवाद निविदा फर्म **राजभाषा सेवा संस्थान** द्वारा किया गया है, जिसे फर्म के निदेशक डॉ. वी. के. अग्रवाल, द्वारा मान्य और सत्यापित किया गया है।

अस्वीकरण: यह निर्णय पक्षकार को उसकी भाषा में समझाने के सीमित उपयोग के लिए स्थानीय भाषा में अनुवादित किया गया है और किसी अन्य उद्देश्य के लिए इसका उपयोग नहीं किया जा सकता है। सभी व्यावहारिक और आधिकारिक उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल अंग्रेजी संस्करण ही प्रामाणिक होगा और निष्पादन व कार्यान्वयन के उद्देश्य से भी अंग्रेजी संस्करण ही मान्य होगा।